युग, साहित्य, राजनीति और राष्ट्रकवि माखनलाल चतुर्वेदी

—जगदीश गुप्त

आधुनिक युग की जिज्ञासा अभेद को वहीं तक स्वीकर करती है जहाँ तक व्यक्तित्व का आत्यंतिक विलयन घटित न हो | आज के मूल्यबोध का आधार वह तन्मयता है जो मृण्मयता का निषेध न करे वरन् उसको सहज स्वीकार करे | दार्शनिक स्तर पर चिन्मयता भी मृण्मयता की उच्चतम परिणति होकर सामने आती है | **अपनी मिट्टी से जुड़ा होना ही उस राष्ट्रीयता की पहचान है, जो साहित्य और संस्कृति दोनों में अंतर्व्याप्त रही है |** कम-से-कम पं. माखनलाल चतुर्वेदी जिस युग में पैदा हुए थे उसकी प्रतीति हम तभी कर सकते हैं जब आत्मोत्सर्ग और देश के लिए बलिदान को सर्वोपरि मानव-मूल्य के रूप में स्वीकार करें |

व्यक्तित्व की नयी धारणा बेबसी और बेचारेपन से मुक्त होकर मानव मात्र के गौरव और स्वाभिमान के रूप में सारी विषमताओं के बावजूद अपने को स्थापित करना चाहती है | वर्तमान युग में यह प्रखर सत्य है | इस स्थिति तक पहुँचने में जो लम्बी यात्रा तय की गयी और जिनके द्वारा तय की गयी उनमें माखनलाल चतुर्वेदी साहित्य के क्षेत्र अग्रणी रहे हैं | **उनकी पत्रकारिता उनके साहित्य-कर्म का अभिन्न अंग रही है तथा उनकी राजनीति ने देश-मुक्ति और मानव- मुक्ति में किसी प्रकार का अंतर नहीं किया |** उनकी क्रांतिमुखी वैष्णवता राष्ट्रीयता के साथ एकात्म दिखायी देती है | उनकी मुक्ति-चेतना परलोकोन्मुखी न होकर निरन्तर लोक की ओर उन्मुख रही | माखनलाल जी के व्यक्तित्व और उसके माध्यम से उनके युग को समझने के लिए अनिवार्य है कि उस संघर्ष तथा उस इतिहास पर दृष्टिपात किया जाय |

उन्नीसवीं शती के द्वितीयार्द्ध 1857 की प्रथम राष्ट्रीय क्रांति का आरम्भ होता है | गुलामी का गहरा अहसास और अंग्रेजों के चंगुल से देश को मुक्त कराना सर्वोपरि लक्ष्य हो गया | “ पराधीन सपनेहुँ सुख नाहिं” मात्र नारी-भाव न होकर समस्त मानवता का भाव हो गया जिससे उस समय की राष्ट्रीयता अनुप्राणित हो उठी| सन् 1919 में खण्डवा निवासी ठाकुर लक्ष्मण सिंह का प्रयाग के निहालपुर के ठाकुर रामनाथ सिंह की पुत्री सुभद्रा कुमारी चौहान से परिणय होता है | झाँसी की रानी का वर्चस्व उनकी कविता में फूट पड़ता है | नर्मदा के साथ बुंदेलखण्ड की धरती का स्वर जुड़ गया | ठाकुर लक्ष्मण सिंह जबलपुर चले गये और माखनलाल जी के साथ वहीं “कर्मवीर” का सम्पादन करने लगे | सुभद्रा जी भी राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भाग लेने लगीं | दादा का निर्देशन और कारावासी जीवन उन्हें प्रेरणा देकर समाज-सेविका के रूप सक्रिय करता रहा | “ झाँसी की रानी” कविता जिस वातावरण में रची गयी उसमें 17 जनवरी से प्रकाशित होने वाले “कर्मवीर” की क्रांतिकारिता का भी योगदान था | 1920-21 में सुभद्रा जी की कविताएँ सर्वप्रथम “कर्मवीर” में ही प्रकाशित हुईं और वे लोकप्रिय होती गयीं | महादेवी जी सुभद्रा जी की सहपाठिनी रहीं और प्रयाग ने दोनों को प्रेरणा दी |

माखनलाल जी का परिचय क्रांतिकारी दल से सन् 1905 में असित गांगुली और फणींद्र मजूमदार के माध्यम से स्थापित हुआ | उस समय देश के कुछ तरुणों ने व्रत लिया था कि देश से अंग्रेजों को बाहर कर देंगे | बंकिमचंद्र की साहित्यिक प्रेरणा “वंदेमातरम्” के रूप में सबको अदम्य उत्साह से भर रही थी | बंगाल के तरुणों की अनुगूँज नागपुर और जबलपुर के क्षेत्रों में सुनायी देने लगी | **नांदनेर से लौटे माखनलाल जी ने इस वैष्णव क्रांति को जिस गहराई से आत्मसात किया वह गाँधी जी की वैष्णवता से एकात्म हो गयी |** हिंसा-अहिंसा के द्वंद्व से ऊपर उठकर लक्ष्य की प्राप्ति का संकल्प जन-जन में व्याप्त हो गया | लोकमान्य और सुभाष का रास्ता भी माखनलाल को अपना ही लगा | उग्रवादिता से प्रभावित तरुणाई को बलिदान का पंथ आकर्षक लगा | हत्या का मार्ग छोड़कर उन्हें बलि-पंथी होना आत्मगौरव के उपयुक्त लगा | ‘वेंकेटेश्वर समाचार’, ‘भारत-मित्र’ और ‘हिंदी केसरी’ का क्रांतिकारी उद्घोष साहस और शौर्य का प्रतीक बन गया | **पं. माधवराव सप्रे का योगदान माखनलाल जी को दूनी शक्ति दे गया | उनके प्रति दादा का असीम आदर और विश्वास था |** ‘कर्मवीर’ को उनसे बहुत शक्ति-सहयोग मिला | अंततः ‘कर्मवीर’ ‘एक भारतीय आत्मा’ की आत्मा बन गया |

**श्री गंगराजे और माखनलाल चतुर्वेदी ने 7 अप्रैल 1913 को ‘प्रभा’ नामक एक मासिक पत्र निकालना शुरू किया जिसके लिए कालांतर में अध्यापक-वृत्ति से त्यागपत्र भी देना पड़ा |** मात्र तीस रुपये के वेतन पर वे अनाम रह कर उसका सम्पादन करने लगे | उनकी लेखनी का लोहा व्यापक रूप में मान लिया गया | यहाँ तक कि बालकृष्ण नवीन असली सम्पादक की खोज में प्रवृत्त हो गये और जब उन्हें वास्तविकता का ज्ञान हुआ तो वे माखनलाल जी की प्रतिभा और निष्ठा दोनों के कायल हो गये | जैसे प्रयाग से ‘सरस्वती’ निकल रही थी वैसे ही मध्यप्रदेश से ‘प्रभा’ का प्रकाशन एक कीर्तिमान बन गया | ‘सरस्वती’ साहित्य के नवजागरण का आधार बनी और ‘प्रभा’ राष्ट्रीय और सामाजिक चेतना का संवहन करने लगी | 1915 से ‘प्रभा’ को नया रूप प्राप्त हुआ जिसमें नवीन जी का विशेष योगदान था | नवीन जी ही उन्हें ‘प्रताप’ ले गये और उनकी पत्रकारिता में 1923-25 तक एक और अध्याय जुड़ गया किंतु ‘कर्मवीर’ कर्मवीर ही रहा | लाला लाजपत राय द्वारा कहे गये वाक्य से उसकी महत्ता निभ्रांत रूप से प्रकट होती है **—“माखनलाल का केवल यही कार्य उनको अमर बनाने के लिए काफी है |” कर्मवीर को महाकौशल की राजनीति की ‘गीता’ भी कहा गया है | 1921,22 और 27 में वे राजद्रोह के अभियोग में जेल भेजे गये | उनकी विद्रोही लेखनी से शासन विचलित हो उठा** |

‘वह वाणी’ शीर्षक से उन्होंने जो कुछ स्वयं लिखा वह उनके अंतर्मन और अंतर्संघर्ष दोनों को उजागर करता है | कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

‘एक वाणी है, जो झोपड़ियों की कराह को राजमहलों में ले जाकर टकराती है और राजमहलों के अपमानों को झोपड़ियों के सेवा-पथ से मिले प्रभु के प्रसाद की तरह ग्रहण करती है |’...

‘एक वाणी है, जो संकटों को प्रार्थना बनाकर बोलती है और विनाश की धमकियों में विभु की सुनहली आशा का दर्शन करती है |...

लोक जीवन की वंशी बनकर, उनकी भैरवी बनकर, उनकी साँस बनकर, उनकी उसँस बनकर और उनका मस्तक बनकर स्थिर रहता है | संकट-गृह में, कारागार में और वध-गृह में वह मुक्ति की एक ही वाणी बोलता है | रूढ़ी के गुमराहों को वह प्रभु का पता देता है |’

यह वाणी बापू के देहावसान के बाद संगम के विशेषांक में छपी थी | ‘साहित्य-देवता’ में काव्यात्मक-चिंतन से स्फुटित वाणी का ऐसा ही रूप शत-शत मुद्राओं में प्रकट हुआ है | एक जगह वे कहते हैं—“यदि आप साहित्य-देवता नहीं समझ पाते तो फेंकिये उसे, कर्मवीर पढ़िये, कर्मवीर में मैं आपके लिए ही मजदूरी करता हूँ |” जबलपुर की सेण्ट्रल जेल से पं. बनरसीदास चतुर्वेदी को लिखे गये पत्र में उन्होंने स्पष्ट कहा है | “अमर साहित्य के निर्माण में सामयिकता की जरूरत नहीं है, (मैं) यह नहीं मानता” (1930)

—खण्ड आठ का प्रक्कथन, रचनावली |

वाणी की कितनी छवियाँ उनके लेखन में मिलती हैं, कहना कठिन है | ‘देश की स्वाधीनता की तैयारी’ के संदर्भ में वे व्यंग्यपूर्वक लिखते हैं —

‘अंग्रेजी का एक शब्द है हिपाक्रेसी— जरा सुधार लीजिये तो हो जाता है डिप्लोमेसी और उसके स्वरूप को थोड़ा और बदल दीजिये तो वह हो जाता है ‘एक्पीडिएंसी’ | इसका सीधा-सादा अर्थ है—धोखा | धोखा ऐसा, जिसे दुश्मन भी जान न पाये, प्रतिस्पर्धा अनुमान न पाये|”

—अग्रलेख, टिप्पणी,पृ.241, खण्ड 8,रचनावली

उनकी काल-दृष्टि बहुआयामी थी | सामयिक संदर्भों में जीते हुए भी वे कालातीत दृष्टि की पहचान रखते थे | उनमें त्रिकालज्ञता की गहरी समझ थी | उन्होंने एक जगह लिखा है— “जिसे हम भूतकाल कहते हैं, वह अनंत है, शोधों, यादों और कृतियों के इतिहास से भरा हुआ, जिसे हम भविष्यकाल कहते हैं, वह हमारी सृजनशीलता का अटल विश्वास है जिसे हमने भूतकाल की संचित निधि से पाया है, किंतु जिसे हम वर्तमान काल कहते हैं वह हमारी साँसों में से इस तरह फिसल रहा है मानो वह अभी-अभी है और अभी ही हाथ से निकल जायेगा | बाजार में निकली हुई बर्फ की चट्टान की तरह |”

खण्ड-5, प्राक्कथन से

**मुझे माखनलाल चतुर्वेदी के भीतर एक सजग, संवेदनशील चित्रकार-मूर्तिकार के दर्शन होते हैं विशेषतः “हिमकिरीटिनी” रूप में जब वे भारतमाता की काव्यमयी मौलिक कल्पना करने लगते हैं |** उनके भाषणों का अंत प्रायः इसी अनुभूतिशील कल्पना से होता था | इसके पीछे इतिहास की सजीव छाया गतिमान दीखती है | राष्ट्रीयता से ही बंकिमचंद्र के उपन्यासों में बंगाली समाज में विशेषतः प्रचलित दुर्गा की पौराणिक धारणा के साथ मातृ-भूमि की नवकल्पित भावना भी जुड़ गयी और एक नया रूप सामने आ गया | निराला ने उसे “भारति जय विजय करे” के रूप में गीतात्मक छवि प्रदान की | परंतु माखनलाल जी ने उसे जैसा सर्वांग रूप में विश्वसनीय बना दिया वह अप्रतिम है | “माता भूमिः पुत्रो हं पृथिव्या” की वैदिक धारणा भी इसमें समाहित है | पंत जी ने उसे ग्रामवासिनी कहकर राहुग्रसित शरदेंदु हासिनी के रूप में भारत माता का संकटग्रस्त स्वरूप उभार दिया | निश्चय ही चतुर्वेदी जी का दिया हुआ रूप अधिक लोक ग्राह्य सिद्ध हुआ और उनकी वैष्णव भावना के अनुरूप भी प्रतीत हुआ | “एक भारतीय आत्मा” जिस पुरुष की “पुष्प की अभिलाषा” से पहचाना जाता है उसका पूरा स्वरूप “हिमकिरीटिनी” की मातृमयी कल्पना से अभिन्न दिखायी देता है | पूजा का जो बलिदान भाव उसमें प्रकट हुआ है वह चतुर्वेदी जी के पूरे जीवन का सार सिद्ध होता है | उसे छायावादी, रहस्यवादी, प्रगतिवादी आदि की तरह “बलिदानवादी” कहना संगत नहीं लगता क्योंकि वह भावोन्मेष से जुड़ा है, किसी सुस्पष्ट विचारधारा से उसे आँका नहीं जा सकता | वह अस्तित्व की उन जड़ों तक जाता है जो धरती के भीतर होते हुए भी अलक्षित बनी रहती है | उन्हीं मूल्यों से मौलिकता शब्द सार्थक होता है | उसी से माखनलाल जी ने “साहित्य जीवन की भित्ति’’ कहने का साहस किया | जीवन को साहित्य का आधार कहना तो आम बात है |—यात्रा-पुरुष, पृ.9 |

उनका साहित्यबोध ऐसा था कि किसी जगह वह राजनीति से नहीं दिखायी देता वरन् बहुधा उसके ऊपर प्रतिष्ठित प्रतीत होता है | अज्ञेय जी ने इस बात को अपने ढ़ंग से रेखांकित किया है जो अनुपेक्षणीय है |

—“वह एक व्यक्ति है जो पूरी तरह आकण्ठ राजनीति में डूबा हुआ है, राजनीति दृष्टि से प्रतिबद्ध, राजनीतिकर्मी है, लेकिन उसके साथ-साथ उतनी ही गहराई से, उतनी ही निष्ठा के साथ एक-दूसरे के क्षेत्र में भी प्रतिबद्ध है, साहित्य और वह व्यक्तित्व बिना किसी कठिनाई के, मतिभ्रम के, इन दोनों प्रतिबद्धताओं को अलग रख सकता है और निबाहता चलता है | राजनीति से प्रतिबद्ध होने के कारण वह साहित्य को राजनीति का पिछलग्गू नहीं बनाता है | साहित्यकार के रूप में, कवि के रूप में वह स्वतंत्र है, और स्वतंत्रता के प्रति उसकी प्रतिबद्धता जरा भी कम नहीं है |”

पूज्य माखललाल चतुर्वेदी का देहावसान संयोगवशात् उसी दिन हुआ जिस दि राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी बलिदान हुए यानी 30 जनवरी | और अज्ञेय जी का देहवसान उसी दिन हुआ जिस दिन दादा का जन्म यानी 4 अप्रैल | जन्म-मृत्यु की किस नियति ने बाँध दिया था उनके सम्पूर्ण जीवन को कि राष्ट्रीयता और साहित्य अभिन्न बने रहे |

-------------

[सम्मेलन-पत्रिका-त्रैमासिक—माखनलाल चतुर्वेदी जन्मशती विशेषांक-भाग 74 : संख्या 1-2; सम्पादक डॉ.प्रेमनारायण शुक्ल —हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग,12, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद]